भारत एक जीवित सत्ता है

• के.एम. मुनशी

कुछ साल पहले मैंने इतिहास के बारे में कहा था, किसी देश के सच्चे इतिहास में वहां की जनता की कथा होनी चाहिए. देश के लोगों की युगों की यह गाथा उनकी उपलब्धियों का बखान होनी चाहिए. भौतिक और आर्थिक स्थितियों के प्रति वहां की लोगों की प्रतिक्रिया के माध्यम से; जीवन को प्रभावित करने वाली शक्तियों को जन्म देने वाले राजनीतिक परिवर्तनों के माध्यम से; साहित्यिक और कलात्मक उपलब्धियों के माध्यम से; सामूहिक समन्वय के विकास को गति देने वाले अथवा उसमें गतिरोध उत्पन्न करने वाले विचारों के माध्यम से यह सारा विवरण सामने लाया जा सकता है. वे मूल्य जिन्हें लोगों ने स्वीकार किया, और जो लोगों की सामूहिक आकांक्षा का प्रतिनिधित्व करते हैं, इस प्रक्रिया का हिस्सा हैं. इसलिए, इतिहास का मुख्य उद्देश्य उन मूल्यों की तलाश कर उन्हें सामने लाना है जो युग-युग में देश की जनता की सामूहिक इच्छा को विकसित करते हैं. भारत का ऐसा इतिहास लिखना अभी बाकी है.

ऐसे इतिहास को लिखने के मार्ग में आने वाली बाधाओं से मैं परिचित हूं. जानकारी के हमारे स्रोत अपर्याप्त हैं, और जहां तक विदेशी स्रोत हैं, उनमें भारत की उपलब्धियों के बारे में पूर्वग्रहों का होना स्वाभाविक है. इस संदर्भ में अनुसंधान भी बहुत कम हुआ है, और वह असम्बद्ध भी है.

भारत की प्राचीन साहित्यिक परम्परा में इतिहास और पुराण-कथाओं के अलग-अलग क्षेत्र रहे हैं. पर आगे चलकर ये दोनों पारम्परिक इतिहास ही बन गये. आज जिस कलियुग में हम जी रहे हैं, उसका विवरण रखने लायक ही नहीं माना गया था. वर्तमान और भविष्य के नमूने के रूप में ही अतीत को संजोया गया है. प्राचीन भारतीय लेखकों की ऐसी रचनाएं बहुत कम हैं जो इतिहास पर प्रकाश डालें. पुराणों और काव्यों जैसे साहित्यिक स्रोतों ने अभी अपनी ऐतिहासिक सम्पदा का पूरा दर्शन नहीं कराया है. पुरालेखी जानकारियां महत्वपूर्ण तो हैं, पर आधी-अधूरी हैं.

विदेशी यात्रियों द्वारा प्रस्तुत किया गया

विवरण भारत की महत्वपूर्ण झांकियां तो प्रस्तुत करता है लेकिन ये विवरण उथले निरीक्षण का परिणाम हैं. फिर भी अतीत को पुनर्सृजित करने में वे बहुत सहायक हैं. तुर्क, अफगान और मुगल शासकों के दरबारी इतिहासकारों ने जो 'इतिहास' लिखा है, उसमें ऐतिहासिक सामग्री की सम्पदा तो है, पर वह प्रशंसात्मक ही है. ब्रिटिश विद्वानों ने, जिन्होंने दरबारी इतिहासकारों की सामग्री की मदद ली है, कुल मिलाकर भारतीय इतिहास के अध्ययन में बाधा ही डाली है. उदाहरण के लिए ऐसे विद्वानों में एक महत्वपूर्ण नाम सर एच.एम. एलियट का है. उन्होंने राजनीतिक उद्देश्यों से फारसी और अरबी 'इतिहासों' का अनुवाद किया है. डॉ. मौलाना नदवी जैसे विद्वान ने भी भारतीय इतिहास कांग्रेस के सातवें अधिवेशन के अध्यक्ष के रूप में 'प्रारम्भिक मध्ययुगीन भारत' के बारे में बोलते हुए कहा था कि 'इतिहासों' में से चयन और अनुवाद दोनों में ईमानदारी नहीं है. पर दुर्भाग्य से एलियट की यही किताब मध्ययुगीन भारत के हमारे आधुनिक इतिहासों का स्रोत-ग्रंथ रही है. इसका परिणाम यह हुआ है कि हमारे ये इतिहास न तो भारत के अतीत का सही चित्रण है और न ही यह बताते हैं कि तुर्क, अफगान और मुगल हमलों का भारतीयों ने कैसे मुकाबला किया, उन उतार-चढ़ावों के बारे में उनकी क्या प्रतिक्रिया रही और कैसे फारसी, तुर्की संस्कृतियों के भारतीय संस्कृति से जुड़ने के फलस्वरूप पुनर्जागरण उभरा.

हमारे अधिकांश इतिहास में ब्रिटिश-काल का लेखा-जोखा भी उतना ही त्रुटिपूर्ण है. सामान्यत: इसमें यही मिलता है कि अंग्रेज़ों ने कैसे हम पर कब्ज़ा किया और भारत को उससे क्या लाभ मिला. यह हमें असली भारत नहीं दिखाता; न ही इसमें हमें वह सब मिलता है जो हमने देखा, अनुभव किया और भोगा. इसमें विदेशी प्रभावों से जुड़ी हमारी प्रतिक्रियाएं भी नहीं दिखतीं और न ही यह पता चलता है कि पश्चिम से सम्पर्क के फलस्वरूप हमने कौन से मूल्य और संस्थान स्थापित किये.

इन पुस्तकों में भारत का जो इतिहास वर्णित है, उसमें ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य का अभाव होना स्वाभाविक है. यह भी हमारा दुर्भाग्य रहा कि पिछले दो सौ सालों में हमने न केवल यही इतिहास पढ़ा, पर अनजाने में ही उसी के आधार पर हमने जीवन के प्रति अपने दृष्टिकोण को भी गढ़ा. हमारे स्कूलों और विश्वविद्यालयों में पढ़ाये जानेवाले इतिहास ने भारत की समस्याओं को बढ़ाया ही है. पीढ़ियों तक हमें विदेशी हमलों के बारे में तो बताया गया, पर इसका विवरण कहीं नहीं मिलता कि हमने उनका मुकाबला कैसे किया या कब और कैसे कहीं हम जीते भी. हिंदू

समाज-व्यवस्था की निंदा तो सिखायी गयी, लेकिन यह नहीं बताया गया कि राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक शक्तियों के संश्लेषण के परिणामस्वरूप यह व्यवस्था बनी कैसे, सदियों तक जनता में विध्वंसकारी परिवर्तनों को सहने की शक्ति इसने कैसे दी. यह भी नहीं बताया गया कि कैसे इस व्यवस्था ने मुश्किल स्थितियों में जीवन और संस्कृति की रक्षा की और कैसे अनुकूल समय में वह लचीलापन विकसित किया जिसने व्यवस्थित विकास को सम्भव बनाया. इसी समाज-व्यवस्था की शक्ति ने राष्ट्रीय संस्कृति को इस योग्य बनाया था कि वह स्वयं को नयी परिस्थितियों के अनुसार ढाल सके.

दुर्भाग्य रहा कि पिछले दो सौ सालों में हमने न केवल यही इतिहास पढ़ा, पर अनजाने में ही उसी के आधार पर हमने जीवन के प्रति अपने दृष्टिकोण को भी गढ़ा.

पाठकों को यह तो पढ़ाया गया कि सिंकदर ने अल्पकालीन सफलता वाला आक्रमण कैसे किया, पर इस बारे में कुछ नहीं बताया गया कि उस काल में गंगा की घाटी में शानदार साम्राज्य कैसे विकसित हुआ था और इससे भी अधिक महत्वपूर्ण संस्कृति कैसे पनपी थी. दिल्ली के सुलतानों के महलों के रहस्यों का वर्णन तो मिलता है, लेकिन उन नायकों-नायिकाओं के वंश के क्रिया-कलापों की कोई चर्चा नहीं है जिन्होंने सदियों तक मध्य एशियाई दरिंदों का मुकाबला किया. मुस्लिम अत्याचारों का विवरण तो दिया गया, लेकिन दोनों समुदायों के सामाजिक और आर्थिक जीवन में विकसित हुए समन्वय को अनदेखा ही किया गया. 1857 के महान राष्ट्रीय विद्रोह को अंग्रेज़ों ने गदर का नाम दिया. इसके विवरण में यह तो बताया गया कि विदेशियों ने कैसे भारत को कुचला लेकिन उस तथाकथित ऐतिहासिक अध्ययन से यह तथ्य बाहर ही रहा कि विदेशियों को देश से निकालने के लिए दिल्ली के मुगल सम्राट के नेतृत्व में देश के अधिकांश भागों में सभी समुदायों के राष्ट्रभक्त लोग किस तरह एकत्र हुए थे, लड़े थे.

हमारी भाषाओं और हमारे समुदायों की विविधता की गाथा अक्सर दुहरायी जाती है, लेकिन वे तथ्य रेखांकित नहीं किये जाते जिन्होंने भारत को भारत बनाया है. पिछली दो सदियों में देश में भाषायी एकता बनी रही. देश के बहुत बड़े हिस्से में एक प्रकार की लोक भाषा काम में लायी जाती थी और संस्कृत, जो कि हज़ार सालों से राजदरबारों की भाषा थी, और हमेशा से संस्कृति की भाषा बनी रही, देश के अधिकांश हिस्सों में जीवन,

भाषा और साहित्य को प्रभावित करती रही. तीन हज़ार साल से अधिक समय तक धर्म-शास्त्र ने देश को एक करने वाली सामाजिक शक्ति प्रदान की. आर्य, या कहना चाहिए हिंदू संस्कृति, (क्योंकि इसपर पर्याप्त द्रविड़ प्रभाव था) जो समय-समय पर स्वयं को बदलती रही, 'महाभारत' और 'रामायण' समेत अन्य संस्कृत ग्रंथों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रेरणा पाती रही. इस संस्कृति ने एक प्रबल सृजनात्मक शक्ति बनकर जन-भावना को आकार दिया. युग के बाद युग बदले. मिथकीय वशिष्ठ से लेकर आधुनिक गांधीजी तक ने उन जीवन-मूल्यों से आत्म-संतोष पाया जिनका मूल उपनिषदों में खोजा जा सकता है!

ब्रिटिश-सम्पर्क के फलस्वरूप पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव भी हम पर पड़ा. अपने इतिहास की पुस्तकों में हमने इस बात को बिल्कुल भुला दिया कि इस प्रभाव ने सोये हुए एक विशाल जीव को जगा दिया था– उसमें अतीत की शक्ति और आधुनिक सम्भावनाओं की चेतना भर दी थी. इस बात को भी उचित स्थान नहीं मिला कि यूरोपीय विचारों और ब्रिटिश जनतांत्रिक परम्पराओं के प्रभाव में, अपनी संस्कृति की पकड़ को बनाये रखते हुए भारत ने स्वयं को आधुनिक स्थितियों के अनुकूल बनाया. इस सबके परिणामस्वरूप नये बौद्धिक और कला-आंदोलनों ने जन्म लिया और ब्रिटेन की जनतांत्रिक परम्पराओं को हमने अपना लिया. यह तथ्य भी इतिहास की किताबों में प्रमुखता से नहीं आता. यह इतिहास हमें यह भी पूरी तरह से नहीं बताता कि राष्ट्रवाद की यूरोपीय अवधारणा के प्रभाव में आर्य धर्म (भारतीय संस्कृति) किस तरह धीरे-धीरे एक शक्तिशाली नव-राष्ट्रवाद के रूप में विकसित हुआ जिसने एक पंथ-निरपेक्ष राज्य की अवधारणा को स्वीकारा. यह अवधारणा और तकनीक भारतीय थी.

इतिहासकारों की पुरानी परम्परा का मानना था कि सैनिक-राजनीतिक साम्राज्यवाद इस 'आध्यात्मिक देश' के लिए एक अपरिचित चीज़ है. लेकिन भारत पर आर्यों की विजय जितनी धार्मिक और सांस्कृतिक थी, उतनी ही सैन्य-राजनीतिक भी थी. यदि राजघरानों के बजाए साम्राज्यवादी शक्ति के उठने और गिरने पर ज़ोर दिया जाए, तो 600 ईस्वी पूर्व से लेकर 320 ईस्वी तक के मगध और सातवाहन साम्राज्य अद्भुत थे. 320-750 ईस्वी के गुप्त और हर्ष साम्राज्यों का काल इतिहास का चरमबिंदु था. 1000 ईस्वी से लेकर 1300 ईस्वी में परमारों और चौलाओं ने अपने साम्राज्य स्थापित किये. विभिन्न राज्यों में सत्ता के लिए संघर्ष चलता रहा. मध्य एशिया के दुर्दांत हमलों ने साम्राज्य मज़बूत करने के सारे प्रयासों को असफल बना दिया.

अलाउद्दीन खिलजी के नेतृत्व में तुर्की की सत्ता ने एक नये ताकतवर साम्राज्य की नींव रखी. सन् 1300 से लेकर 1526 तक दिल्ली पर उसकी सल्तनत रही. फिर लगभग पौने दो सौ साल तक मुगलों के आधिपत्य में दुनिया ने सर्वाधिक शानदार साम्राज्य देखा. मराठों ने इस मुगल साम्राज्य का पतन सुनिश्चित किया, पर इसके पहले कि वे अपनी स्थिति मज़बूत करते अंग्रेज़ आ गये. सन् 1818 से लेकर 1947 तक का ब्रिटिश काल पूर्ण गुलामी का काल था. लेकिन इसी काल में राष्ट्र जागा भी और महात्मा गांधी के नेतृत्व में अहिंसक तरीकों से देश 15 अगस्त 1947 को आज़ाद हो गया. इसी दौरान नवजागरण का भी जन्म हुआ जिसने उस सबको ताकत दी जिसके लिए इतिहास में भारत को जाना जाता था. यही वह काल था जब दुनिया के अन्य हिस्सों में भी इसी तरह की गतिविधियां चल रही थीं. यह कहना कि देश सारा समय चिंतन में ही डूबा रहा, इतिहास के प्रमुख तथ्यों को नकारना होगा.

भारत के इतिहास में बाहरी हमलों की भूमिका को अबतक बहुत बढ़ा-चढ़ा कर दिखाया जाता रहा है. इसे उचित अनुपात में लाना होगा. दुनिया के अन्य हिस्सों की तरह भारत पर भी विदेशी हमले हुए, और उनका प्रभाव भी पड़ा. पर ऐसे तीन ही बाहरी आक्रमण हुए जिन्होंने इतिहास का रुख बदला और जीवन और संस्कृति के ताने-बाने को प्रभावित किया. पहला आर्यों का आक्रमण था जो इतिहास-पूर्व काल में हुआ. इस आक्रमण ने राष्ट्र के जीवन और संस्कृति के ढांचे को प्रभावित किया था, आकार दिया था. दूसरा तुर्क-अफगान आक्रमण था जिससे भारत पर इस्लामिक प्रभाव की शुरूआत हुई और इस देश के जीवन में नये रंग भरे गये. पर, जल्दी ही, इन आक्रमणों का विदेशी सैनिक हमले का स्वरूप खो गया. विजेताओं ने अपने भाग्य को इस देश के साथ जोड़ दिया और कुछ सर्वश्रेष्ठ शासकों और ताकतवर राजनीतिक संस्थाओं को जन्म दिया. इस तथाकथित मुगल-काल का समय लगभग चार शताब्दी का रहा है. सन् 1300 से लेकर 1700 तक. तीसरा हमला अंग्रेज़ों का था जिन्होंने सन् 1818 से लेकर 1947 तक इस देश पर शासन किया. शायद यह अकेला विदेशी शासन का काल था. अंग्रेज़ों ने विदेशियों की तरह, एक विदेशी धरती से, विदेशी हितों के लिए भारत पर शासन किया. इसके साथ ही यूरोप से सम्पर्क जुड़ा, एक नयी जागृति आयी और नया सांस्कृतिक संश्लेषण हुआ.

पर इस सारी अवधि में जाति और संस्कृति की ताकत, जिसने समय-समय पर दिशा और लक्ष्य बदले, ने विभिन्न आंदोलनों के माध्यम से स्वयं को अभिव्यक्त

किया है. भारत का इतिहास इस बात की कहानी नहीं है कि उसने विदेशी आक्रमणों को कैसे झेला, यह कहानी है इस बात की कि उसने उन हमलों का मुकाबला कैसे किया, और कैसे अंततः उनपर विजय पायी. ब्रिटिश विद्वानों द्वारा शुरू की गयी आधुनिक इतिहास अनुसंधान की परम्पराएं, दुर्भाग्य से, मिस्र, यूनान और रोम के प्रति उनके दृष्टिकोण से आच्छादित रही हैं. इन देशों का अतीत मृत हो चुका है, म्युजियम में रखे जाने लायक रह गया है. भारत के अतीत की शव-परीक्षा वैज्ञानिक दृष्टि से सही नहीं होगी. भारत के इतिहास का हर काल-खंड अपनी सीमा में सभी जीवन-शक्तियों और राष्ट्रीय संस्कृति द्वारा सृजित एवं पोषित विचारों की अभिव्यक्ति है. ये शक्तियां और विचार हर क्षण तेज़ी से आगे बढ़ रहे हैं. भारत के आधुनिक इतिहासकारों को भारत को एक जीवित सत्ता के रूप में देखना चाहिए. यह जीवित तत्व एक सतत केंद्रीय प्रेरणा है, जीवन जिसकी अभिव्यक्ति मात्र है. इस दृष्टिकोण के बिना भारत को समझना असम्भव है. करोड़ों सालों की ऊर्जा वाला यह भारत अपने प्राचीन स्व के प्रति अनिष्ठावान न होने के लिए दृढ़-प्रतिज्ञ होने के बावजूद आधुनिक जीवन की सर्वोच्च चुनौतियों को स्वीकारने में सक्षम है.

(दि हिस्ट्री एंड कल्चर ऑफ दि इंडियन पीपल की भूमिका पर आधारित)

उपन्यास इतिहास और कला

जब कभी भी उपन्यासकार इतिहास की सामग्री से काम लेगा, वह अतीत का चित्र खड़ा करके ही संतोष नहीं कर लेगा. वह वर्तमान को उद्भाषित करेगा, अपने युग के सपनों को उसमें मिलायेगा. यही नहीं, वह उसे भविष्य का संदेशवाहक भी बनायेगा और इसके लिए उसे अपनी ओर से कुछ कहने की आवश्यकता नहीं रहेगी. उसकी भाषा, शैली तथा उपन्यास का पैटर्न स्वयं अपनी कथा कहेंगे. घटनाओं पर साहित्य अपना पैटर्न देता है, इतिहास अपना. साहित्य का पैटर्न इतिहास के घर से उधार मांगी हुई या चुरायी हुई चीज़ नहीं होती, उसकी अपनी चीज़ होती है. जब साहित्य तथा इतिहास के पैटर्न एक हो जाते हैं, वहीं इतिहास कला की वस्तु हो जाता है.

– देवराज उपाध्याय